विमर्शों के सरोकारों पर गहरा आघात किया है। इसमें सहज कुछ नहीं असहज सब कुछ है। राष्ट्र के प्रमुख अंग संस्कृति के अभ्युदय द्वारा ही राष्ट्र की वृद्धि संभव है। यदि जन और जनरक्षकों को ही संस्कृति से विरहित कर दिया जाय तो राष्ट्र का लोप समझना चाहिए। असैनिक राजनीतिक नेतृत्व इकतरफा राष्ट्रप्रेम की जो बुनियाद रख रहा है उसके पीछे की विचार सरणी यह तवज्जो ज्यादा देती है कि देश के सजग प्रहरी शहीद होने के लिए ही हैं। रहस्यमय तरीके से राष्ट्रीय सुरक्षा के महत्वपूर्ण मुद्दों पर सार्वजनिक बयानबाजी माइनस तापमान में तैनात सिपाहियों को कैसे संदेश संप्रेषित करेगी और एकता की कौन सी माला पिरोएगी?

मानव जीवन अपनी निजता तथा सामाजिकता दोनों में बहुमुखी होता है। भौतिक, आध्यात्मिक या आर्थिक आदि कोई भी पक्ष चाहे कितना ही महत्वपूर्ण और अस्तित्व के लिए अपरिहार्य क्यों न हो; अपने आप में न तो स्वायत्त होता है और न ही अन्य पक्षों से असंबंधित। 'साहित्य, संगीत, कला-विहीन साक्षात पशु पुच्छ-विशाणहीनः' के द्वारा जिस चिरंतन सत्य की पुष्टि की गयी है वह वास्तव में मानवीय समाज के सतत अस्तित्व सार्थकता और परिपूर्णता में संस्कृति-संवेदना की महती भूमिका की ओर इंगित करता है। संगीत-माधुर्य का भाव मुक्ति में है बंधन में तो नहीं है न। बाजार और विश्व नीतियों ने हमें बांधा ज्यादा है मुक्त तो कम ही किया है। विचारों की जो सुनामी आई है उससे कोई भला बच कैसे सकता है! जो चमचमाता दृश्य सृजित किया गया है उसमें मूल्यों के प्रतिमानों की पुनरव्याख्या ही नहीं उनके क्रियान्वयन के फौलादी योगाभ्यास हैं। अब विजय के स्वप्न और माध्यम बदल रहे हैं। विचारों और मनोरंजन के बड़े-बड़े माल बाकायदा संस्थानबद्ध किए जा रहे है। ये बहुशक्तियाँ वैशिष्ट्य और निष्ठाओं को उसकी जड़ों से पृथक करने में श्रम साध्य उपक्रम में पूरी निष्ठा से जुटी हैं। बाजार का सबसे बड़ा षड्यंत्र यही है कि वह अप्रत्यक्ष वार करता है। किसी समाज का सब कुछ छीन लेने के लिए, उसका अस्तित्व खतरे में डालने का सबसे कारगर रास्ता है उसे उसकी मान्यताओं से विछिन्न कर देना। बाजार ने जरूरत को इच्छा में तब्दील किया है। आधुनिकता की दौड़ में कोई भी खुद को पीछे नहीं रहने देना चाहता लिहाजा हमारी इच्छाएँ हम नहीं बाजार निर्धारित कर रहा है। चिंतन संवेदना को पाला मर चुका है।

भाग और भोग वाले कुसमय में की बोर्ड पर सब कुछ सेलीब्रेट करने वाला समाज एक श्रेष्ठता के भाव को सार्वजनिक करने के लिए उपलब्ध तकनीक का प्रयोग कर रहा है। आत्मकेंद्रिकता के मेले में फॉरवर्ड कर फॉरवर्ड बने रहने की चाहत। जीवन के लगभग हर पक्ष पर उदीयमान सर्वसमयी उपलब्धता की परिणति अत्यंत अशिव है। सपनों की दुनिया ! ग्लैमर की चकाचौंध में स्याह अंधेरे पर निगाह ही नहीं जाती। सबको एक ही लाठी से हांक कर व्यक्ति से चेहरा और जुबान, दिल और दिमाग छीनकर यंत्रवत पिरो देने की सोच, जो स्पष्ट तौर पर प्रायः दिखाई नहीं पड़ती। उन्नत तकनीक के पहले से कला और संगीत थे। यह मनुष्य की सृजनात्मकता है। धीरे- धीरे बहुत कुछ लुप्त हो रहा है। और अगर है तो मात्र ब्रांडिंग। जिनके पास सत्ता है उन्हें जयमाला में से कहीं ज्यादा रुचि विज्ञापन और ब्रांडिंग में है। भावनात्मक अभिव्यक्ति को समझने की कोई समझ नहीं। और मजे की बात यह कि जिनके पास यह विवेक है उनके पास न तो पद न ही सत्ता। संगीत के क्षेत्र में शोर बढ़ता जा रहा है। लय का स्थान बीट्स ले रही है। हृदय की मुक्तावस्था की बात करने का जिम्मा उनके पास जो स्वयं हृदयविहीन। दीगर कि विविध भारती की जयमाला जवानों को ही नहीं तमाम श्रोताओं की लोकप्रियता का पर्याय रहा है तथापि संवेदनाबोध की दृष्टि से शून्य तो बढ़ ही रहा है। विराट सांस्कृतिक एकरूपता, सांस्कृतिक स्वायत्तता के लिए जो स्पेस दे रही है वह गंभीर है। जिस गीत शृंखला का अर्थ हमारे मानस पटल पर है वह कहाँ तक, कब तक रहेगा! अभी 21 वीं सदी का प्रथम चरण है और कितना बदलाव दिखाई पढ़ रहा है। जहाँ तक जमीन से जुड़ी विधाओं का सवाल है तो कुछ लोग इसके संरक्षण पर जोर दे रहे हैं। वास्तव में पूंजीवादी व्यवस्था जन सरोकारीय एवं मानवीय संवेदनापरक कार्यक्रमों को केवल संरक्षण देती है और समाज को खुश रखती है, वाहवाही लूटती है कि देखिए हमने इन्हें प्रोत्साहित किया- संग्रहालय में रखा, नया मुलम्मा चढ़ाकर ब्रांडिंग की ! क्षेत्रीय प्रतिबंधों से मुक्ति और वैश्विक एकता का जो नया सुर संधान हो रहा है उसकी हलचल से समाज का कोई हिस्सा बाकी नहीं है; बल्कि इसका रकबा सब जगह सबके विकास के साथ की गर्जना से बढ़ रहा है। ऐसा नहीं है कि ये जो परिवर्तन हो रहे हैं शहरों और महानगरों तक ही सीमित हैं, इनकी व्यापकता ग्रामीण सुदूर लोगों के जीवन पर भी देखी जा सकती है। हर घर में टेलीविजन सेट और लगभग सबके पास मोबाइल फोन। नयी लाइफ स्टाइल और नयी संस्कृति। इन्फोटेनमेंट उद्योग आज पूंजी निवेश का भी एक बहुत बड़ा सेक्टर बन चुका है। सैटेलाइट के माध्यमों से उच्छृंखल यौन प्रदर्शन सनसनीखेज हिंसात्मक प्रदर्शनों द्वारा जो कचरा इधर झोंका जा रहा है उनसे वैचारिक प्रदूषण का खतरा बढ़ रहा है। इस दूषित अपसंस्कृति के प्रवाह में आचार-व्यवहार परंपराएं सदाशयता मानवता-निष्ठा और राष्ट्रवाद को नए कलेवर में गढ़ा जाना शुभ तो नहीं कहा जा सकता। नयी नातेदारियों के बीच जयमाला के बहुमूल्य मोतियों को बचना है, देखिये क्या होता है। ■